

ठाकुर रुद्रेश्वरी प्रसाद सिन्हा

बनाम

श्रीमती रानी प्रभावती एवं अन्य

26 अक्टूबर 1951

[पतंजलि शास्त्री, मुखर्जी, एस. आर. दास और

विवियन बोस न्यायमूर्तिगण]

*घाटवाली भू-धृतियां-प्रकृति और अनुषंग-जमींदारी घाटवालियों की अन्यक्राम्यता-
तालुका काकवाड़ा अन्यक्राम्य है या नहीं।*

तालुक काकवाड़ा अपने उद्गम में एक जमींदारी घाटवाली भू-धृति था और वैसा ही बना रहा, तथा वस्तुतः तब से इसे उसी रूप में माना जाता रहा है। भले ही कैप्टन ब्राउन की सनद के आधार पर यह एक सरकारी घाटवाली भू-धृति बन गया हो, फिर भी राजा कादिर अली की सनद के अधीन या स्थायी बंदोबस्त के पश्चात किसी भी स्थिति में, यह एक जमींदारी घाटवाली बन गया और इस रूप में न्यायिक रूप से मान्यता प्राप्त खड़गपुर की रूढ़ि के अनुसार जमींदार की सहमति से अन्यक्राम्य हो गया।

[घाटवाली भू-धृतियों की प्रकृति और अनुषंगों पर चर्चा की गई]।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : दीवानी अपील सं. 75 वर्ष 1950।

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में दिनांक 22 नवंबर 1944 के निर्णय से अपील, जो 1939 के विविध वाद सं. 174 में भागलपुर के अधीनस्थ न्यायाधीश के दिनांक 13 जुलाई 1940 के आदेश से उद्भूत 1940 की अपील सं. 238 में है। वाद के तथ्य निर्णय से प्रकट होते हैं। अपील मूल रूप से प्रिवी काउंसिल में दायर की गई थी और तत्पश्चात इसे सर्वोच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सुना गया।

एन. सी. चटर्जी (उनके साथ बी. सेन), अपीलकर्ता के लिए।

बी. सी. डे (उनके साथ रघुनाथ झा), उत्तरदाताओं के लिए।

1951. अक्टूबर 26. न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा सुनाया गया।

दास, न्यायमूर्ति- यह अपील प्रिवी काउंसिल से स्थानांतरण पर हमारे समक्ष सुनवाई के लिए आई है। अपीलकर्ता तालुक काकवाड़ा का वर्तमान धारक है- जो महालत खड़गपुर से संबद्ध है। उत्तरदाता बनैली राज का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसने महालत खड़गपुर का भी अधिग्रहण कर लिया है। उत्तरदाताओं ने अपीलकर्ता के विरुद्ध किराये और उपकर के बकाये के लिए रुपये 11,587-14-6 की एक डिक्री प्राप्त की और तालुक काकवाड़ा की कुर्की और बिक्री द्वारा अपनी डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन किया। 29 अगस्त 1939 को, अपीलकर्ता निर्णीत ऋणी ने दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अंतर्गत यह अभिकथन करते हुए एक आपति दायर की कि चूँकि तालुक काकवाड़ा को घाटवाली भू-धृति पर धारित किया गया था, इसलिए इसे धन डिक्री के निष्पादन में बेचा नहीं जा सकता। - यह आपति कुछ अधिक ही विस्तृत थी, क्योंकि घाटवाली भू-धृति पर धारित सभी भूमियां अनिवार्य रूप से अनन्यक्राम्य नहीं थीं। वस्तुतः, *काली प्रसाद सिंह बनाम आनंद राय* ⁽¹⁾ में, जो महालत खड़गपुर के भीतर खड़ना के घाटवाली महाल से संबंधित था, साक्ष्य ने स्पष्ट रूप से ऐसे कई दृष्टांत स्थापित किए जिनमें खड़गपुर में महालों पर लागू होने वाले निर्विवाद स्थानांतरण और बिक्री हुई थी और प्रिवी काउंसिल द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सही दृष्टिकोण यह होगा कि खड़गपुर में ऐसी भू-धृति अनन्यक्राम्य नहीं थी, और इसे घाटवाल द्वारा स्थानांतरित किया जा सकता था या उसके विरुद्ध डिक्री के निष्पादन में बेचा जा सकता था, यदि ऐसे स्थानांतरण या बिक्री पर जमींदार द्वारा सहमति दी गई हो। किराये के बकाये के लिए डिक्री के निष्पादन में जमींदार के कहने पर बिक्री में अनिवार्य रूप से ऐसी सहमति का अस्तित्व विवक्षित है। *नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती* ⁽²⁾ के बाद के वाद में, जो हंडवा

(1) 1887) एल.आर. 15 आई.ए. 18; आई.एल.आर. 15 कैल. 471.

(2)(1923) एल.आर. 51 आई.ए. 37; आई.एल.आर. 3 पैट. 184; ए.आई.आर. (1924)

के घाटवाली महाल से संबंधित था, लॉर्ड सुमर ने मान्यता दी कि खड़ना घाटवाली महाल वाद में प्रिवी काउंसिल के निर्णय का उस वाद में प्रस्तुत साक्ष्य द्वारा पूर्णतः समर्थन किया गया था और यह कि भारत में उस प्राधिकार का बार-बार अनुसरण और प्रयोग किया गया था, और, जहां तक रिपोर्टों से पता चलता है, रूढ़ि के प्रमाण की पुनः आवश्यकता के बिना। लॉर्ड समनर ने, हालांकि, यह इंगित किया कि यह स्पष्ट था कि चूँकि रूढ़ि प्रमाण पर निर्भर थी, और चूँकि प्रश्नगत भू-धृति खड़गपुर की जमींदारी में और इसके जमींदार के अधीन थी, इसका उन घाटवाली भू-धृतियों से कोई संदर्भ नहीं हो सकता था जो न तो उसके अधीन थीं और न ही उसकी जमींदारी का भाग थीं। ऊपर संदर्भित बाद के वाद में प्रिवी काउंसिल ने यह सोचने का कोई आधार नहीं देखा कि खड़गपुर की रूढ़ि की घाटवाली भू-धृतियों पर कोई प्रयोज्यता थी, जो हंडवा की तरह, खड़गपुर जमींदारी से स्वतंत्र थीं, भले ही वे खड़गपुर से अधिक दूर न हों। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि यह भली-भांति स्थापित है-और इसके विपरीत हमारे समक्ष कोई आग्रह नहीं किया गया है-कि खड़गपुर के जमींदार के अधीन धारित घाटवाली भू-धृतियां, न्यायिक रूप से मान्यता प्राप्त रूढ़ि द्वारा, जमींदार की सहमति से अन्यक्राम्य थीं जबकि सीधे सरकार के अधीन धारित हंडवा जैसी घाटवाली भू-धृतियां अनन्यक्राम्य थीं। प्राधिकारियों की इस स्थिति में, अपीलकर्ता निर्णीत ऋणी ने 31 मई 1940 को संहिता की धारा 47 के अंतर्गत यह दावा करते हुए एक नई आपत्ति याचिका दायर की कि तालुक काकवाड़ा एक सरकारी घाटवाली भू-धृति के अधीन धारित था। उन निष्पादन कार्यवाहियों में अवधारण के लिए मुख्य प्रश्न यह था कि क्या तालुक काकवाड़ा एक सरकारी घाटवाली था, जैसा कि अपीलकर्ता निर्णीत ऋणी द्वारा अभिकथन किया गया था, या एक जमींदारी घाटवाली था जो स्वयं उनके अधीन धारित था, जैसा कि उत्तरदाताओं डिक्री-धारकों द्वारा दावा किया गया था।

विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि तालुक काकवाड़ा खड़गपुर के राजा के अधीन एक जमींदारी घाटवाली था और निर्णीत ऋणी की आपत्ति को अस्वीकार कर

दिया। निर्णीत ऋणी ने उच्च न्यायालय में अपील की। अपील प्रथम बार मनोहर लाल और शियरर न्यायमूर्तिगण वाली पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आई। मनोहर लाल, न्यायमूर्ति इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि तालुक काकवाड़ा एक सरकारी घाटवाली था और अपील स्वीकार करने के इच्छुक थे। शियरर, न्यायमूर्ति ने यह विचार व्यक्त किया कि यद्यपि तालुक काकवाड़ा एक समय सरकारी घाटवाली था, यह ऐसा नहीं रहा और एक जमींदारी घाटवाली बन गया और बना रहा तथा इस रूप में अन्यक्राम्य था और वे अपील खारिज करने के इच्छुक थे। इस मतभेद के दृष्टिगत अपील को तीसरे न्यायाधीश के रूप में चटर्जी, न्यायमूर्ति को निर्देशित किया गया। चटर्जी, न्यायमूर्ति ने अभिनिर्धारित किया कि तालुक काकवाड़ा एक जमींदारी घाटवाली था और इस रूप में अन्यक्राम्य था और तदनुसार अपील खारिज कर दी। निर्णीत ऋणी ने प्रिवी काउंसिल में अपील करने की अनुमति प्राप्त की। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, अपील प्रिवी काउंसिल से स्थानांतरण पर हमारे समक्ष सुनवाई के लिए आई है।

यद्यपि घाटवाली भू-धृतियों का सटीक उद्गम सामान्यतः ब्रिटिश शासन से पूर्व के अशांत समय की भांति और अस्पष्टता में लुप्त हो गया था, घाटवाली भू-धृतियों की प्रकृति और उनके उद्देश्यों तथा अनुषंगों को निर्णीत वादों की एक श्रृंखला द्वारा पूर्णतः स्थापित किया गया है। 1765 में या उसके आसपास जमींदारों की स्थिति का, जब ईस्ट इंडिया कंपनी ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी प्राप्त की थी, राइट ऑनरेबल टी. पेम्बर्टन ले (जो बाद में लॉर्ड किंग्सडाउन बने) द्वारा *राजा लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार* ⁽¹⁾ के वाद में अपने निर्णय में वर्णन किया गया है :

अपनी-अपनी जमींदारियों के भीतर कई बड़े जमींदारों को ऐसे अधिकार सौंपे गए थे, - और ऐसे कर्तव्यों का भार सौंपा गया था, जो उचित रूप से सरकार के थे। उन्हें रैयतों से भूमि की सकल उपज का एक निश्चित भाग एकत्र करने का प्राधिकार था। वे, कई प्रकरणों

(1) (1855) .6 एम.आई.ए. 101 पृष्ठ 108 पर।

में, कर अधिरोपित करते थे और पथकर उद्ग्रहीत करते थे, और वे शुल्क, अनुलाभ, और इसी प्रकार की उगाहियों से अपनी आय बढ़ाते थे, जो आधुनिक समय और अधिक सभ्य राष्ट्रों के लिए पूर्णतः अज्ञात नहीं हैं। दूसरी ओर, वे अपनी जमींदारियों के भीतर शांति और व्यवस्था बनाए रखने, और न्याय का प्रशासन करने के लिए आबद्ध थे, और, उस उद्देश्य के लिए, उन्हें दीवानी और आपराधिक न्याय के न्यायालयों को बनाए रखना पड़ता था, काजी, कानूनगो, और थानेदार, या एक पुलिस बल को नियोजित करना पड़ता था। परंतु जहां, अपने राज्यक्षेत्रों के भीतर रैयतों और अन्य निवासियों के विरुद्ध, इनमें से कई सत्ताधारी लगभग राजसी प्राधिकार का प्रयोग करते थे, वहीं, सरकार के विरुद्ध, वे प्रबंधकों या प्रशासकों से कुछ अधिक नहीं थे। उनकी जमींदारियां उन्हें केवल वर्ष दर वर्ष के लिए प्रदान की जाती थीं; उनके जमा , या सरकार को वार्षिक भुगतान की राशि, परिवर्तित होती थी, या वार्षिक रूप से परिवर्तित की जा सकती थी; यह सरकारी अधिकारियों द्वारा तय की गई एक स्वेच्छाचारी राशि थी- जिसकी गणना जमींदार को उसके भरण-पोषण के लिए, और संग्रहण के व्ययों तथा सरकार द्वारा उसे सौंपे गए सार्वजनिक कर्तव्यों के निर्वहन के लिए छूट (भत्ता) देने के पश्चात, सभी स्रोतों से जमींदारी की सकल उपज पर की जाती थी।"

आगे उनके लॉर्डशिप ने प्रेक्षण किया :-

"प्रांतों में सामान्यतः व्याप्त अव्यवस्था के अतिरिक्त, विशिष्ट जिले एक भिन्न प्रकार के विध्वंसों के प्रति अरक्षित थे। इस समय भारत में पर्वतीय या पहाड़ी जिलों में अराजक जनजातियां निवास करती थीं, जो उन्मुक्त स्वतंत्रता का दावा करती थीं, और प्रायः मैदानी निवासियों से भिन्न प्रजाति और भिन्न धर्म की होती थीं, जिन (मैदानी निवासियों) पर उनके अधिक युद्धप्रिय पड़ोसियों द्वारा बार-बार लूटपाट के अभियान किए जाते थे। इन आक्रमणों को रोकने के लिए घाटों, या पर्वतीय दरों की रक्षा और निगरानी करना आवश्यक था, जिनके माध्यम से ये शत्रुतापूर्ण आक्रमण किए जाते थे; और मोहम्मडन शासकों ने घाटवाली भू-धृति नामक एक भू-धृति स्थापित की, जिसके द्वारा व्यक्तियों को, प्रायः उच्च पद

वालों को, कम किराये पर, या बिना किराये के, इन कर्तव्यों का पालन करने, तथा पड़ोसी जिलों में व्यवस्था की रक्षा और संरक्षण करने की शर्त पर भूमियां प्रदान की जाती थीं।"

घाटवाली भू-धृति की प्रकृति और अनुषंगों के इस वर्णन को उच्च न्यायालय (गार्थ, मुख्य न्यायाधीश और मैकडोनेल, न्यायमूर्ति) द्वारा *लीलानंद सिंह बनाम ठाकुर मुनरुंजन सिंह* ⁽¹⁾ में अपनाया गया था, जो हमारे समक्ष पक्षकारों के संबंधित पूर्ववर्तियों के बीच का वाद था और इसी तालुक काकवाड़ा से संबंधित था। विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने पृष्ठ 255 पर कहा :-

"और हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए यह स्मरण रखना अत्यंत आवश्यक है कि इन भू-धृतियों का वास्तविक उद्गम और प्रकृति क्या थी। पूर्व काल में मोहम्मडन सरकार द्वारा उनका सृजन, पहाड़ी जिलों में निवास करने वाली अराजक जनजातियों के आक्रमणों से पर्वतीय दरों की निगरानी और रक्षा करने के लिए एक पुलिस और सैन्य बल उपलब्ध कराने के एक साधन के रूप में किया गया था। उन दिनों सरकार द्वारा भूमि के बड़े अनुदान, प्रायः उच्च पद वाले व्यक्तियों को, कम किराये पर, या बिना किसी किराये के, इस शर्त पर दिए जाते थे कि वे मैदानी निवासियों को इन अराजक घुसपैठों से बचाने के लिए एक पर्याप्त सैन्य बल उपलब्ध कराएंगे और बनाए रखेंगे; और अनुदानग्राहियों ने अपनी ओर से अन्य किरायेदारों को भूमियों को उप-विभाजित कर पुनः प्रदान किया (काफी हद तक उसी प्रकार जैसे सामंती युग में इंग्लैंड में सैन्य भू-धृतियां सृजित की गई थीं), जिनमें से प्रत्येक ने, सामान्यतः एक छोटा किराया चुकाने के अतिरिक्त, इन सैन्य सेवाओं के प्रतिफलस्वरूप अपनी भूमियां धारण कीं, और सरकार की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए (प्रत्येक ने अपने धारण के विस्तार के अनुसार) सशस्त्र पुरुषों की एक विनिर्दिष्ट संख्या उपलब्ध कराई।"

जैसा कि *राजा लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार* (उपरोक्त) में पृष्ठ 125 पर लॉर्ड किंग्सडाउन द्वारा कहा गया है "यद्यपि घाटवाली ग्रामों में घाटवालों के अधिकार की प्रकृति और विस्तार संदेहास्पद हो सकते हैं, और संभवतः विभिन्न जिलों और विभिन्न परिवारों में

(1) (1877) आई.एल.आर. 3 कैल. 251.

भिन्न थे, स्पष्टतः कोई प्राचीन विधि या प्रथा थी जिसके द्वारा इन भूमियों को घाटवालों की सेवाओं को पुरस्कृत करने के लिए विनियोजित किया गया था; ऐसी सेवाएं जो, यद्यपि उनमें पुलिस के कर्तव्यों का पालन सम्मिलित होगा, अपने उद्गम में असैनिक प्रकृति की भांति ही काफी हद तक सैन्य प्रकृति की थीं, और जिनके लिए साधारण पुलिस अधिकारियों से सर्वथा भिन्न वर्ग के व्यक्तियों की नियुक्ति की आवश्यकता होगी"। तदनुसार उनके लॉर्डशिप ने पाया कि खड़गपुर जमींदारी में घाटवाल का पद प्रायः उच्च पद वाले व्यक्तियों द्वारा धारित किया जाता था। *मुनरुंजन सिंह बनाम राजा लीलानंद* ⁽¹⁾ में, जो हमारे समक्ष पक्षकारों के संबंधित पूर्ववर्तियों के बीच का वाद भी था और इसी तालुक काकवाड़ा से संबंधित था, उच्च न्यायालय ने पृष्ठ 86 पर प्रेक्षण किया :-

"ऐसा प्रतीत होता है कि देश के विभिन्न भागों में घाटवाली के सामान्य नाम से ज्ञात भू-धृतियों में पर्याप्त भिन्नता है। वे सभी इस बात में समान हैं कि वे पहाड़ी क्षेत्र के किनारे पर स्थित भूमि के अनुदान हैं, और घाटों या दरों की रक्षा करने की शर्त पर धारित हैं। सामान्यतः, प्रदान की गई सेवा के अतिरिक्त, और भू-धृति की अधीनता को चिह्नित करने के दृष्टिकोण से, जमींदार को एक अल्प लगान देय प्रतीत होता है। परंतु कुछ जमींदारियों और पट्टनियों में ये भू-धृतियां वृहद् , तथा अन्य में लघु , प्रकृति की होती हैं। कभी-कभी बड़े जमींदार की भू-धृति स्वयं भी मूल रूप से इसी प्रकृति की प्रतीत होती है। अधिक प्रायः कई संपूर्ण ग्रामों से मिलकर बनी बड़ी भू-धृतियां जमींदार के अधीन धारित की जाती हैं।"

इसके बाद उनके लॉर्डशिप ने कहा :-

"ये अवर घाटवालियां वे प्रतीत होती हैं जिनमें जमींदार या शासक शक्ति कार्य करने वाले व्यक्तियों से सीधे संव्यवहार करती है, और उन्हें स्थापित ग्रामों में भूमि के टुकड़े समनुदेशित करती है। बड़ी भू-धृतियां अर्ध-सैन्य बस्तियों की प्रकृति की अधिक थीं, जहां एक

(1) (1865) 3 डब्ल्यू.आर. 84.

प्रमुख अपने अनुयायियों के साथ देश के ऐसे भागों में बसाए गए थे जो इतने असुरक्षित थे कि उन पर अन्यथा अधिभोग नहीं किया जा सकता था।"

घाटवाली भू-धृतियों से संबंधित विधि पर *नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती* (उपरोक्त) में लॉर्ड समनर द्वारा विस्तार से विचार किया गया है। एक घाटवाल द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा की शर्तों की विविधता को उनके लॉर्डशिप द्वारा पृष्ठ 50-51 पर इस प्रकार संक्षेपित किया गया था :-

"अपने आप में 'घाटवाल' एक ऐसा पद है जिसका अर्थ किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा समय-समय पर धारित पद से है, जो इसके कर्तव्यों के पालन के लिए आबद्ध है, और जिसके बदले में पदधारी द्वारा प्रतिफल का उपभोग किया जाना है। इस अर्थ के भीतर शर्तों की अत्यधिक विविधता हो सकती है। यह मजदूरी के लिए नियोजन का केवल एक व्यक्तिगत संविदा हो सकता है, जो भूमि के उपयोग का रूप ले लेता है या भूमि में एक वास्तविक संपदा, जो वंशानुगत और शाश्वत हो, परंतु कतिपय सेवाओं या मांगी जाने वाली सेवाओं की शर्त पर हो। वह पद सार्वजनिक या निजी, महत्वपूर्ण या इसके विपरीत हो सकता है। घाटवाल, दर्रे का रक्षक, आक्रमणकारियों के विरुद्ध पूरे ग्रामीण क्षेत्र का सुदृढ़ आधार हो सकता है; वह तुच्छ लुटेरों के विरुद्ध केवल एक संतरी हो सकता है; वह वन्य जीवों के विनाश से फसलों की रक्षा करने वाला एक प्रकार के 'गेम-कीपर' (वन-रक्षक) से अधिक कुछ नहीं हो सकता है। घाटवाली कर्तव्यों को पुलिस कर्तव्यों और अर्ध-सैन्य कर्तव्यों में विभाजित किया जा सकता है, यद्यपि दोनों वर्गों ने अपना बहुत अधिक महत्व खो दिया है, और उत्तरवर्ती (सैन्य) किसी भी सख्त रूप में अब विरले ही प्रदान किए जाते हैं। पुनः, पद के कर्तव्य ऐसे हो सकते हैं जो घाटवाल द्वारा व्यक्तिगत निर्वहन और उस निर्वहन के लिए व्यक्तिगत सक्षमता की मांग करते हों; दूसरी ओर, वे ऐसे हो सकते हैं जिनका निर्वहन 'शिकमी' भू-धृतियों के सृजन द्वारा और एक अधीनस्थ बल की नियुक्ति और अनुरक्षण द्वारा प्रतिनिधिक रूप से किया जा सके, या वे अपनी प्रकृति में ऐसे हो सकते हैं जिनके लिए

केवल थोक में प्रावधान किए जाने की आवश्यकता हो। यह स्पष्ट है कि जहां किसी व्यक्ति और उसके वारिसों को घाटवाल के रूप में अनुदान प्राप्त होता है, या ऐसा माना जाता है कि वह किया गया था भले ही वह बाद में खो गया हो, घाटवाली सेवाओं का व्यक्तिगत निष्पादन तब तक आवश्यक नहीं है जब तक कि अनुदानग्राही उनके लिए उत्तरदायी हैं और उन्हें प्रदान करवाता है: शिब लाल सिंह बनाम मुराद खान, (1868) 9 सुथ. डब्ल्यू.आर. 126।"

इसके पश्चात उनके लॉर्डशिप ने यह इंगित किया कि घाटवाल की नियुक्ति करने वाला वरिष्ठ प्राधिकारी व्यापक रूप से देश की शासक शक्ति हो सकता है, या वह भू-स्वामी हो सकता है जो अपनी संपदा के भीतर सुरक्षा और व्यवस्था बनाए रखने के लिए रूढ़ि द्वारा उत्तरदायी हो, या केवल वह निजी व्यक्ति हो सकता है, जिसके लिए एक विस्तृत संपत्ति के मामले में, चौकीदारों का अनुरक्षण एक नियमित पद के सृजन की आवश्यकता हेतु पर्याप्त महत्वपूर्ण था। यद्यपि कर्मचारी द्वारा व्यक्तिगत सेवा और नियोक्ता द्वारा व्यक्तिगत चयन एवं नियुक्ति सामान्यतः इस संबंध के आवश्यक अनुषंग रहे होंगे, फिर भी यह हमेशा अनिवार्य रूप से ऐसा नहीं था, जैसा कि अंतिम उद्धरण के साथ-साथ पृष्ठ 52 पर लॉर्ड समनर के निर्णय के निम्नलिखित अंश से प्रतीत होता है :-

"दूसरी ओर, ऐसी बड़ी संपदाएं हैं, जिनके स्वामियों को उन्हें या उनके भागों को इस शर्त पर धारित करते हुए पाया जाता है कि वे घाटवाली सेवाएं उपलब्ध कराएंगे, चाहे नियमित रूप से या आवश्यकता पड़ने पर; ऐसी सेवाएं, जिन्हें स्वयं स्वामी के लिए व्यक्तिगत रूप से प्रदान करना असंभव है, और जो उसके लिए तथा उनके लिए जिन्हें वह सेवा प्रदान करता है, केवल इस प्रकार प्रदान की गई भूमियों पर उसके कब्जे के आधार पर संभव हो जाती हैं। ऐसे मामलों में घाटवाली भू-धृति, भले ही मूल रूप से वंशानुगत रूप में प्रदान न की गई हो, आसानी से वैसी बन जाती है, और सामान्यतः पदधारी की मृत्यु पर उसके परिवार के किसी सदस्य को प्राप्त होती है, भले ही वह आवश्यक रूप से ज्येष्ठ सदस्य न हो।

इस प्रकार खड़गपुर में घाटवालों के पास एक निश्चित जमा पर शाश्वत वंशानुगत भू-धृति है: *मुनरुंजन सिंह बनाम लीलानंद सिंह*।"

एक घाटवाल द्वारा सेवाओं को प्रदान किए जाने की आवश्यकता ने स्वाभाविक रूप से ऐसी भू-धृति के एक अतिरिक्त अनुषंग को जन्म दिया, अर्थात्, घाटवाली भूमियों की अनन्यक्राम्यता, क्योंकि घाटवाली भूमियों का अन्यक्रमण आसानी से घाटवाल को उन सभी साधनों से वंचित कर सकता था जो सेवाओं को प्रदान करने में सक्षम बनाने के लिए उपलब्ध कराए गए थे। यह विचार विशेष रूप से वहां लागू होता था जहां वरिष्ठ प्राधिकारी, जिसके द्वारा घाटवाल नियुक्त किए जाते थे और जिसके अधीन घाटवाली भूमियां धारित थीं, स्वयं शासक शक्ति थी। जैसा कि ऊपर पहले ही कहा जा चुका है, अनन्यक्राम्यता के इस अनुषंग की कठोरता, हालांकि, खड़गपुर जमींदारी घाटवालियों के मामले में, *काली प्रसाद बनाम आनंद राँय* (उपरोक्त) के वाद में भली-भांति स्थापित रूढ़ि के रूप में मान ली गई थी, जिसका भारत में रूढ़ि के प्रमाण की पुनः आवश्यकता के बिना बार-बार अनुसरण और प्रयोग किया गया है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट रूप से निष्कर्ष निकलता है कि घाटवाली भू-धृतियों का उद्भव मुगल काल के दौरान हुआ था, कि यद्यपि सेवाओं में पुलिस के कर्तव्य सम्मिलित थे, वे अपने उद्गम में नागरिक प्रकृति के साथ-साथ सैन्य प्रकृति के भी थे और यह कि भू-धृति शासक शक्ति द्वारा सीधे उस घाटवाल को प्रदान की जा सकती थी जिसे सेवाएँ प्रदान करनी थीं ताकि शासक शक्ति और घाटवाल के बीच एक सीधा संबंध स्थापित हो सके अथवा इसे जमींदार द्वारा अपनी जमींदारी की सुरक्षा के लिए या उसे शासक शक्ति को पुलिस और सैन्य सेवाएँ प्रदान करने में सक्षम बनाने के लिए प्रदान किया जा सकता था, जिसे करने के लिए वह उसे दी गई जमींदारी के अनुदान की शर्तों के तहत आबद्ध था। इसके पश्चात प्रश्न यह उठता है कि खड़गपुर के घाटवाल इनमें से किस श्रेणी के अंतर्गत आते हैं।

महालत खड़गपुर एक विस्तृत रियासत थी और प्रत्यक्षतः मुगल सम्राट के प्रति वास्तविक या नाममात्र की निष्ठा रखती थी। अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य मौजूद नहीं है जो यह दर्शाता हो कि खड़गपुर के राजा मुगलों के अधीन किन शर्तों पर रियासत धारण करते थे और निश्चितता के साथ यह कहना कठिन है कि उन्हें तत्कालीन शासक शक्ति को किस प्रकार की या कितनी पुलिस अथवा सैन्य सेवाएँ प्रदान करनी पड़ती थीं। हालाँकि, यह सुरक्षित रूप से कहा जा सकता है कि अन्य सभी जमींदारों की भांति, खड़गपुर के राजा को पर्याप्त थानों या पुलिस प्रतिष्ठानों के रखरखाव के माध्यम से आंतरिक शांति और व्यवस्था बनाए रखनी होती थी और पर्याप्त सैन्य बल प्रदान या व्यवस्थित करके पड़ोसी पहाड़ियों से अराजक जनजातियों के आक्रमणों से किरायेदारों और अन्य निवासियों की रक्षा करनी होती थी। खड़गपुर के राजा जैसे बड़े जमींदार से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती थी कि वे व्यक्तिगत रूप से पुलिस या सैन्य सेवाएँ प्रदान करेंगे और परिणामस्वरूप उनके लिए अपनी जमींदारी की रक्षा करने और शासक शक्ति के प्रति अपनी ओर से सेवाएँ प्रदान करने के लिए अपने स्वयं के घाटवाल नियुक्त करना स्वाभाविक था। जैसा कि राजा *लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार* (उपरोक्त) में पृष्ठ 102 पर लॉर्ड किंग्सडाउन द्वारा कहा गया है, यह भली-भांति स्थापित था कि 1765 से बहुत पहले खड़गपुर के जमींदारों ने अपने पड़ोस के पर्वतीय और अन्य उपद्रवी लोगों के हमलों से अपनी जमींदारियों की रक्षा के उद्देश्य से घाटवाली भू-धृतियों का सृजन किया था। *नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती* (उपरोक्त) में पृष्ठ 68 पर लॉर्ड समनर ने भी यह स्वीकार किया कि 1765 से बहुत पहले खड़गपुर के जमींदार के अधीन उन भूमियों के विभिन्न धारकों द्वारा अपने स्वयं के उद्देश्यों के लिए घाटवाली भू-धृतियाँ सृजित की गई थीं और 1770-1785 के उत्तरार्ध तक श्री क्लीवलैंड ने, जिन्होंने कादिर अली की अल्पवयस्कता के दौरान रियासत का प्रबंधन किया था, इसी नीति का अनुसरण किया था। *नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती* (उपरोक्त) में पृष्ठ 50 पर लॉर्ड समनर ने कहा :-

"संथाल परगना में व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए तीन प्रकार की घाटवाली भू-धृतियां हैं: (क) सरकारी घाटवालियां, जिनका सृजन शासक शक्ति द्वारा किया गया है; (ख) सरकारी घाटवालियां, जिन्हें उनके सृजन के पश्चात और सामान्यतः स्थायी बंदोबस्त के समय एक जमींदारी रियासत में सम्मिलित कर दिया गया था और निर्धारण (assessment) में एक इकाई के रूप में गठित किया गया था; और (ग) जमींदारी घाटवालियां, जिनका सृजन जमींदार या उसके पूर्ववर्तियों द्वारा किया गया था और जो उसकी सहमति से अन्यक्राम्य हैं। इनमें से दूसरा वर्ग वास्तव में पहले वर्ग की ही एक शाखा है।"

प्रश्न तब यह उठता है कि—तालुक काकवाड़ा की घाटवाली भू-धृति, जिससे हम इस वाद में संबंधित हैं, किस श्रेणी के अंतर्गत आती है—क्या यह एक सरकारी घाटवाली थी अथवा खड़गपुर के जमींदारों द्वारा सृजित कई घाटवाली भू-धृतियों में से एक थी।

सौभाग्यवश, हमें किसी प्रकार का अनुमान लगाने की आवश्यकता नहीं है। हमारे समक्ष समस्या मूल अनुदान की वास्तविक प्रकृति और अनुषंगों का निष्कर्ष निकालना नहीं है, जिसे केवल शासक शक्ति और उसके अधिकारियों द्वारा तालुक काकवाड़ा के संबंध में किए गए या न किए गए कार्यों के साक्ष्य से ही एकत्रित किया जा सकता था। हमारे पास साक्ष्य के रूप में काकवाड़ा घाटवाली से संबंधित दो सनदों के प्रामाणिक पाठ उपलब्ध हैं और हमारे पास स्थायी बंदोबस्त विनियम के प्रावधान भी हैं। उस भू-धृति की प्रकृति और अनुषंग अनिवार्य रूप से उन अनुदानों के सही अर्थान्वयन और आशय के साथ-साथ उस पद्धति पर आधारित होने चाहिए जिस तरह से स्थायी बंदोबस्त के समय इसके साथ संव्यवहार किया गया था।

इस चरण पर, महालत खड़गपुर और तालुक काकवाड़ा का एक संक्षिप्त इतिहास देना सुविधाजनक और उपयोगी होगा। 1765 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने मुगल सम्राट से बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी प्राप्त की। दीवानी की प्राप्ति वास्तव में इन तीनों प्रांतों का अर्पण था और ईस्ट इंडिया कंपनी वस्तुतः उन राज्यक्षेत्रों पर संप्रभु शासक शक्ति बन गई।

उस समय एक मुजफ्फर अली महालत खड़गपुर के राजा थे। तालुक काकवाड़ा महालत खड़गपुर के अंतर्गत आता था। 1766 में राजा मुजफ्फर अली ने ईस्ट इंडिया कंपनी के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। विद्रोह को कुचलने के लिए कैप्टन ब्राउन के कमान में एक शक्तिशाली सैन्य बल भेजा गया। अंततः, 1768 में राजा मुजफ्फर अली को अधीन कर लिया गया और कारावास में डाल दिया गया। राजा को पदच्युत कर उनकी रियासत से वंचित कर दिया गया और ईस्ट इंडिया कंपनी ने महालत खड़गपुर का प्रत्यक्ष कार्यभार संभाल लिया और अपने अधिकारियों के माध्यम से इसका प्रबंधन तब तक किया जब तक कि महालत को राजा मुजफ्फर अली के पौत्र, राजा कादिर अली को बहाल नहीं कर दिया गया। 1776 में कैप्टन ब्राउन ने, जो उस समय महालत के प्रभारी थे, दो व्यक्तियों रंकू सिंह और भैरो सिंह को रुपये 245-12-15 के निश्चित वार्षिक जमा पर 22 गांवों के संबंध में एक अमलनामा या सनद (प्रदर्श 1) प्रदान की। वह सनद निम्नलिखित शर्तों में थी:

"कैप्टन जेम्स ब्राउन की मोहर, जंगल-तरी (निम्न वन भूमि) के प्रमुख। विदित हो, बिहार प्रांत के अंतर्गत सरकार मुंगेर के खड़गपुर से संबंधित जिला जंगल-तरी के परगना डांडा सुखवाड़ा के वर्तमान और भविष्य के मामलों के मुतसद्दी, चौधरी, कानूनगो, जमींदार और घाटवाल।

1184 फसली के प्रारंभ से, उक्त ताल्लुक के घाटवाल रंकू सिंह और भैरो सिंह को, उक्त ताल्लुका काकवाड़ा, परगना मजकूर (उपर्युक्त), बिना किसी आपत्ति या विवाद के, पृष्ठांकन में अंकित वर्तमान सिक्कों में 245-12-15 रुपये (दो सौ पैंतालीस रुपये, बारह आने और पंद्रह गंडा) के निश्चित जमा पर, मालवजहात, सैर-वजहात और सभी अनाजों सहित, तथा जमींदारी के अनुलाभों, नानकार, चौधरी और कानूनगो, परगना व्यय, दान में दी गई भूमियों, जैसे ब्रह्मोटर, शिवोत्तर और विष्णुप्रीत भूमि, जागीरदारों की आइमा भूमि, बरकंदाजों (मस्कटधारी), धूपरों (?), महूस (?) आदि को अपवर्जित करते हुए, शाश्वत मुकररी में दिया जाता है। यह अपेक्षित है कि वे शांतिपूर्वक खेती करें (कटा हुआ) और कबूलियत के अनुसार, वर्ष-दर-वर्ष

और फसल-दर-फसल, सरकारी खजाने में सरकार को (कटा हुआ) भुगतान करें। उन्हें ऐसा प्रयास करना चाहिए जिससे उक्त ताल्लुक की खेती दिन-प्रतिदिन बढ़े। वे खेती की कमी के लिए स्वयं को उत्तरदायी समझें। उन्हें अपने अच्छे व्यवहार से किरायेदारों को प्रसन्न और संतुष्ट रखना चाहिए और किसी पर अत्याचार नहीं करना चाहिए तथा अत्यधिक मांग नहीं करनी चाहिए। उन्हें जागीरदारों और बरकंदाजों आदि का भत्ता लगान से अधिक तय नहीं करना चाहिए। उन्हें यह ध्यान में रखना चाहिए। उन्हें अपने क्षेत्राधिकार के भीतर के किरायेदारों और उक्त ताल्लुक के गांवों की सुरक्षा का प्रावधान करना चाहिए। जब कभी हुजूर द्वारा चाकरो (?) को बुलवाया जाए, तो सरदार (?) को अपने आदमियों के साथ उनके समक्ष उपस्थित होना चाहिए। यदि उनकी सीमा के भीतर किसी भी स्थान पर हत्या, उपद्रव, डकैती, चोरी, राजमार्ग डकैती आदि की जाती है, और अपराधी का पता लग जाता है या वह किसी के साथ जानबूझकर षडयंत्र करते हुए पाया जाता है और सरकारी काम प्रभावित होता है, तथा जांच के बाद उचित दंड दिया जाता है, तो वे अपने पद के कारण उत्तरदायी होंगे (?) और उन्हें उनके पद से बर्खास्त कर दिया जाएगा और उन्हें पुनः बहाल नहीं किया जाएगा (अस्पष्ट)। उक्त ताल्लुक के जमींदारों के अमलों को उक्त इस्तमरारी मुकर्ररी लगान निश्चित होने की जानकारी होने पर, वर्ष-दर-वर्ष मुकर्ररी लगान प्राप्त करना जारी रखना चाहिए और एक कौड़ी भी अतिरिक्त नहीं मांगनी चाहिए। उन्हें इसे अनिवार्य मानना चाहिए और जैसा यहाँ लिखा है वैसा ही कार्य करना चाहिए।

दिनांक 25 शव्वाल, 17, तदनुसार 7 पूस बांग्ला, 1183 फसली।

पृष्ठांकन

बिहार प्रांत के अंतर्गत सरकार मुंगेर, जिला जंगल-तरी के खड़गपुर से संबंधित ताल्लुक काकवाड़ा, परगना डांडा सुखवाड़ा को, बिना किसी आपत्ति या विवाद के, घाटवाल रंकू सिंह और भैरो सिंह को नीचे विनिर्दिष्ट वर्तमान सिक्कों में 245-12-15 रुपये (दो सौ पैंतालीस रुपये, बारह आने और पंद्रह गंडा) के निश्चित जमा पर शाश्वत मुकर्ररी में दिया जाता है, जो

मालवजहात, सैर-वजहात और सभी अनाजों सहित सभी स्रोतों से समेकित है, तथा जिसमें जमींदारी के अनुलाभों, नानकार, चौधरी और कानूनगो, उक्त ताल्लुक के व्यय, दान में दी गई भूमियों (जैसे) ब्रह्मोटर, शिवोत्तर और विष्णुप्रीत भूमि, जागीरदारों की जागीर भूमि, बरकंदाजों, धूपरों (?), मलमास (?) आदि को अपवर्जित किया गया है।

निश्चित जमा

रुपये 245-12-15 गंडा।"

इसके बाद 22 मौजों या गांवों का विवरण दिया गया था। यह ध्यान देने योग्य है कि यह अनुदान रंकू सिंह और भैरो सिंह को दिया गया था, जिन्हें "उक्त ताल्लुक के घाटवाल" के रूप में वर्णित किया गया है, जिससे यह संकेत मिलता है कि वे दोनों व्यक्ति पहले से ही घाटवाल थे। अनुदानग्राहियों पर सामान्य रूप से अधिरोपित किए गए कर्तव्यों और विशेष रूप से किरायेदारों को सुरक्षा प्रदान करने तथा अपने आदमियों के साथ हुजूर के समक्ष उपस्थित होने के कर्तव्य के बारे में, *नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती* (उपरोक्त) में पृष्ठ 46 पर लॉर्ड समनर के शब्दों में, "उन कर्तव्यों से आगे नहीं बढ़ें जो उस समय जमींदारों द्वारा सामान्यतः निभाए जाते थे। अनुदान के मुख्य भाग में या नीचे दिए गए पृष्ठांकन में तीरंदाजों और बरकंदाजों की एक निश्चित संख्या के नियमित दल को बनाए रखने का कोई अनुबंध नहीं था, जैसा कि आमतौर पर साधारण घाटवाली अनुदानों में पाया जाता है और वास्तव में जैसा कि इसी ताल्लुक काकवाड़ा के संबंध में राजा कादिर अली के बाद के अनुदान में पाया जाता है। अंत में, मुख्य पैराग्राफ के अंत में उक्त ताल्लुक के जमींदारों के अमलों को निश्चित मुकर्ररी लगान प्राप्त करने और एक कौड़ी भी अतिरिक्त न मांगने की चेतावनी को इस बात का संकेत माना जा सकता है कि जमींदार वास्तव में इस अनुदान में रुचि रखते थे। इन आधारों पर, *मुनरंजन सिंह बनाम राजा लीलानंद* (उपरोक्त) में पृष्ठ 85 पर कलकत्ता उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों का यह प्रेक्षण कि कैप्टन ब्राउन की सनद

उन्हें "एक नई भू-धृति के सृजन के बजाय किसी विद्यमान भू-धृति की पुष्टि अधिक प्रतीत होती है", काफी तर्कसंगत लगता है। मामले का यह दृष्टिकोण काकवाड़ा घाटवाली के बाद के इतिहास के साथ पूरी तरह सुसंगत होगा, जिसका वर्णन अभी आगे किया जाएगा।

तथापि, यह इंगित किया गया है कि इस सनद की तिथि पर वास्तव में खड़गपुर का कोई राजा नहीं था और चूंकि महालत का प्रशासन और प्रबंधन ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से कैप्टन ब्राउन द्वारा किया जा रहा था, इसलिए उनके द्वारा किए गए अनुदान को 'सरकारी घाटवाली भू-धृति' का सृजन माना जाना चाहिए। सनद के शीर्ष पर स्थित मोहर के बारे में कहा जाता है कि वह इस बात का संकेत है कि 'जंगल तराई' के सरदार के रूप में अपनी क्षमता में सनद प्रदान करते हुए कैप्टन ब्राउन ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से कार्य कर रहे थे। सनद को परगना डांडा सुखवाड़ा के वर्तमान और भविष्य के मामलों के मुतसदियों, चौधरियों, कानूनगो, जमींदारों और घाटवालों को संबोधित किया गया था और यह तर्क दिया गया है कि यदि कैप्टन ब्राउन खड़गपुर के जमींदार की ओर से कार्य कर रहे होते, तो जमींदारों को सनद संबोधित करना पूरी तरह से अनुपयुक्त होता। यह तथ्य कि अनुदान 1184 फसली के प्रारंभ से शुरू होना था, इसके केवल पहले से मौजूद घाटवाली भू-धृति की पुष्टि होने के विरुद्ध जाता है। वर्ष-दर-वर्ष, फसल-दर-फसल, कबूलियत के अनुसार सरकारी खजाने में भुगतान करने का निर्देश स्पष्ट रूप से बताता है कि सनद ने एक सरकारी घाटवाली भू-धृति का सृजन किया। मुगल काल में जमा की कोई निश्चितता नहीं थी और अनुदान वार्षिक रूप से किए जाते थे तथा जमा में परिवर्तन किया जा सकता था। इसलिए, यह तर्क दिया गया है कि इस सनद में एक निश्चित वार्षिक जमा का प्रावधान एक निश्चित जमा पर मौजूदा अनुदान की पुष्टि के रूप में नहीं माना जा सकता है। इन सभी मामलों को ध्यान में रखते हुए, न्यायमूर्ति शियरर और न्यायमूर्ति चटर्जी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि 1777 की कैप्टन ब्राउन की सनद के तहत तालुक काकवाड़ा एक सरकारी घाटवाली बन गया। तर्क की यह दिशा प्रभावहीन या असंगत नहीं है, हालांकि यह अनिवार्य रूप से निर्णायक नहीं हो सकती

है, क्योंकि कैप्टन ब्राउन ने निस्संदेह ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से कार्य करते हुए, उस अंतःकालीन अवधि के दौरान उसकी ओर से या उसके हित में सनद जारी की होगी जो अंततः काकवाड़ा का जमींदार बनता। यदि मामला केवल इसी सनद तक सीमित रहता और आगे कुछ न हुआ होता, तो शायद कुछ विश्वसनीय तर्क के साथ यह कहा जा सकता था कि इस सनद द्वारा शासक शक्ति द्वारा एक नई भू-धृति का सृजन किया गया था, लेकिन मामला वास्तव में केवल कैप्टन ब्राउन की सनद तक ही सीमित नहीं है, और हमें यह देखना होगा कि इस तालुक काकवाड़ा के साथ बाद में कैसा संव्यवहार किया गया और बाद की घटनाओं का इस तालुक के घाटवाल की स्थिति और अधिकारों पर क्या प्रभाव पड़ता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि 1780 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने महालत खड़गपुर को पदच्युत राजा मुजफ्फर अली के पौत्र, कादिर अली को बहाल कर दिया था। यद्यपि गवर्नर-जनरल का औपचारिक आदेश 1781 में आया था, किंतु महालत वास्तव में 1780 में ही राजा कादिर अली को बहाल कर दी गई थी। उस समय राजा कादिर अली केवल पांच या छह वर्ष के बालक थे और भागलपुर के कलेक्टर श्री क्लीवलैंड ने अवयस्क राजा कादिर अली की ओर से महालत खड़गपुर का प्रबंधन किया। 17 जनवरी, 1780 को राजा कादिर अली के नाम और मुहर के तहत उन्हीं दो व्यक्तियों, रंकू सिंह और भैरो सिंह को, निम्नलिखित शर्तों में एक नई सनद (प्रदर्श 1 (क)) प्रदान की गई :-

"(विजेता आलम के अधीन राजा कादिर अली की मुहर-1193)।

विदित हो, बिहार प्रांत के अंतर्गत सरकार मुंगेर के महाल खड़गपुर से संबंधित परगना डांडा सुखवाड़ा के वर्तमान और भविष्य के मामलों के मुतसद्दी और चौधरियों एवं कानूनगो के पदों को धारण करने वाले गुमाशते:

उक्त परगना से संबंधित ताल्लुक काकवाड़ा की घाटवाली सेवा भू-धृति, एक सनद के तहत, सरकार के प्रति निष्ठा और वफादारी की शर्त पर, सरदार सहित 172 मस्कटधारी और तीरंदाजों के साथ, भैरो सिंह और रंकू सिंह द्वारा धारित है। हाल ही में, (उक्त भू-धृति को)

पृष्ठांकन के अनुसार सामान्य रूप से पुष्ट और अक्षुण्ण रखते हुए, 1189 फसली राजवाड़ा तदनुसार 1188 फसली मुगलिया के खरीफ मौसम के प्रारंभ से नियत और प्रदान किया जाता है। उन्हें ईमानदारी और स्वामिभक्ति के साथ अपने कर्तव्यों और दायित्वों का निर्वहन करना चाहिए तथा किरायेदारों को अपने अच्छे व्यवहार से प्रसन्न और संतुष्ट रखना चाहिए, और घाटों तथा चौकियों की बहुत सावधानी और सतर्कता से निगरानी करनी चाहिए, ताकि कोई चोर या रात्रि-लुटेरा उनके आस-पास न आ सके। यदि, ईश्वर न करे, किसी की संपत्ति चोरी हो जाए या लूट ली जाए और मवेशी छिपा दिए जाएं या हत्या कर दी जाए, तो उन्हें संपत्ति सहित चोरों और रात्रि-लुटेरों का पता लगाना चाहिए, संपत्ति मालिक को वापस करनी चाहिए और उपद्रवियों के दल को हुजूर के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए तथा हत्या सिद्ध करनी चाहिए। यदि वे चोरों का पता लगाने और हत्या तथा मवेशियों को छिपाने (चोरी) को सिद्ध करने में विफल रहते हैं, तो वे इसके लिए स्वयं को उत्तरदायी मानेंगे। उन्हें सामान्य रूप से सरकार को अग्रहायण का भुगतान करना जारी रखना चाहिए। बुलाए जाने पर, उन्हें आदमियों के दल के साथ हुजूर के समक्ष उपस्थित होना चाहिए। यह अपेक्षित है कि आप उन्हें उस स्थान का स्थायी घाटवाल मानें और उन्हें उनके कब्जे में बनाए रखें और आपको उन्हें ठोस सलाह देने में विफल नहीं होना चाहिए ताकि हर तरह से सरकार का लाभ और किरायेदारों का कल्याण सुनिश्चित हो सके। इसे अनिवार्य मानें और तदनुसार कार्य करें।

"दिनांक, वर्ष 22 के पवित्र माह मुहर्रम का 17 वाँ सातवाँ (एस.आई.सी) दिन, तदनुसार- 1194 हिजरी।"

पृष्ठांकन

परगना डांडा सुखवाड़ा के ताल्लुक काकवाड़ा की घाटवाली सेवा भू-धृति, सरकार के प्रति निष्ठा और वफादारी की शर्त पर, सरदार सहित 172 मस्कटधारी और तीरंदाजों के साथ, रंजू सिंह और भैरो सिंह को 1189 फसली राजवाड़ा, तदनुसार 1189 फसली मुगलिया के खरीफ मौसम के प्रारंभ से पूर्ववत् प्रदान की जाती है।

मस्कटधारी और तीरंदाज- 165

रु., ए. डी.

निश्चित शाश्वत क्विट रेंट	...	245-12-15
लगान	...	215- 0-15
जमींदारी	...	30-12-0

रु., ए. डी.

रु., ए. डी.

भैरो सिंह द्वारा	178- 3- 5 रंकू सिंह द्वारा	67-9-10
लगान	... 155-14-15 लगान	 59-2-0
जमींदारी	... 22- 4-10 जमींदारी	... 8-7-10

इसके पश्चात् जागीर में दिए गए 16 मौजों की सूची दी गई थी। यदि तालुक काकवाड़ा, अपने उद्गम में, खड़गपुर के जमींदार द्वारा सृजित एक जमींदारी घाटवाली था और यदि कैप्टन ब्राउन की सनद ने उस अंतःकालीन अवधि के दौरान केवल उस विद्यमान भू-धृति की पुष्टि की थी जब वह खड़गपुर के संपूर्ण महालत के प्रभारी थे और ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से इसका प्रबंधन कर रहे थे, किंतु उसके हित में जो अंततः खड़गपुर का राजा बनता, तो राजा कादिर अली को जमींदारी बहाल होने पर वे स्वाभाविक रूप से अपने अधीन घाटवालों के पक्ष में नई सनदें जारी करके उनकी स्थिति और प्रास्थिति को स्पष्ट करते। मामले के इस दृष्टिकोण से, राजा कादिर अली की सनद ने एक जमींदारी घाटवाली भू-धृति के रूप में तालुक काकवाड़ा की मूल प्रास्थिति को केवल नियमित किया और इसकी शर्तों को अधिक स्पष्ट और सुस्पष्ट रूप से विनिर्दिष्ट किया।

तथापि, अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया है कि कैप्टन ब्राउन की सनद ने एक सरकारी घाटवाली भू-धृति का सृजन किया था और राजा कादिर अली की सनद उस

सरकारी घाटवाली भू-धृति की पुष्टि से अधिक कुछ नहीं थी। शीर्ष पर मुहर में उत्कीर्ण लेख पर निर्भरता व्यक्त की गई है जो विजेता सम्राट शाह आलम को संदर्भित करता है और यह तर्क दिया गया है कि यह स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि यह सनद भी एक सरकारी अनुदान होने के लिए अभिप्रेत थी। हम इस तर्क को युक्तियुक्त मानकर स्वीकार करने में असमर्थ हैं। विजेता सम्राट शाह आलम का संदर्भ एक नाममात्र के प्रमुख की केवल औपचारिक मान्यता से अधिक कुछ नहीं हो सकता है। यह कथन कि तालुक काकवाड़ा की घाटवाली सेवा भू-धृति "172 मस्कटधारी और तीरंदाजों के साथ भैरो सिंह और रंकू सिंह द्वारा एक सनद के तहत धारित" थी आदि को, किसी पूर्वतर सनद को संदर्भित करने वाला माना जा सकता है जिसमें मस्कटधारी और तीरंदाजों की संख्या विनिर्दिष्ट थी और यह आवश्यक नहीं है कि वह कैप्टन ब्राउन की 1777 की सनद को ही संदर्भित करे, जिसमें, जैसा कि इंगित किया गया है, मस्कटधारी और तीरंदाजों की किसी भी संख्या का कोई विनिर्देश नहीं था। इस सनद के तहत अनुदानग्राहियों की भू-धृति 1189 फसली राजवाड़ा, तदनुसार 1188 फसली मुगलिया के खरीफ मौसम के प्रारंभ से शुरू हुई। भू-धृति के प्रारंभ होने की यह तिथि कैप्टन ब्राउन की सनद में उल्लिखित प्रारंभ की तिथि से भिन्न है। कैप्टन ब्राउन की सनद में रुपये 245-12-15 का निश्चित जमा जमींदारी रसूम से अपवर्जित था, जबकि राजा कादिर अली की सनद के तहत 245-12-15 रुपये का निश्चित शाश्वत क्विट रेंट जमींदारी रसूम सहित था, जिसमें लगान रुपये 215-0-15 रुपये और जमींदारी रसूम रुपये 30-12-0 था। जो बात और भी अधिक महत्वपूर्ण है, वह दोनों अनुदानग्राहियों के बीच क्विट रेंट का प्रभाजन है, जो सनद के अंत की ओर पाया जाता है। मात्र एक पुष्टिकर्ता अनुदान के मामले में इस प्रकार का प्रभाजन पूर्णतः अनुपयुक्त था। पुनः, इस अनुदान में 16 मौजे समाविष्ट थे जबकि कैप्टन ब्राउन की सनद में 22 मौजे शामिल थे। यहां तक कि 16 मौजों में से कई के नाम कैप्टन ब्राउन की सनद के अंत में मौजों के विनिर्देश में नहीं पाए जाते हैं। एक और महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि राजा कादिर अली की सनद के नीचे (अंत में) दिए गए 16 मौजों

में, दोनों अनुदानग्राहियों को भिन्न मौजों में भिन्न और सुभिन्न हिस्से रखते हुए दर्शाया गया था। कुछ मामलों में, एक संपूर्ण मौजा भी अनन्य रूप से किसी एक या दूसरे को आवंटित किया गया था। इसके अतिरिक्त, यदि कैप्टन ब्राउन की सनद ने एक सरकारी घाटवाली भू-धृति का सृजन किया था, तो यह बोधगम्य नहीं है कि राजा कादिर अली को उस अनुदान की पुष्टि करने के लिए क्यों कहा जाना चाहिए जिससे उनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई सरोकार नहीं था। पुनः, यह सर्वविदित है कि इस समय खड़गपुर के 98 घाटवालों ने अपनी सनदें राजा कादिर अली से प्राप्त कीं, जबकि केवल तीन बड़े घाटवालों, अर्थात् लक्ष्मीपुर, हंडवा और चंदन कटोरिया के घाटवालों ने अपनी सनदें राजा कादिर अली से नहीं बल्कि कैप्टन ब्राउन के उत्तराधिकारी श्री डिकेंसन से प्राप्त कीं। इस अंतर को केवल इसी आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है कि तालुक काकवाड़ा सहित ये 98 घाटवालियां जमींदारी घाटवालियां थीं, जबकि तीन बड़ी घाटवालियों को सरकारी घाटवालियों के रूप में माना गया था। यह तथ्य कि भागलपुर के कलेक्टर श्री क्लीवलैंड इस समय महालत खड़गपुर के प्रभारी थे और इसका प्रबंधन कर रहे थे, कि ये 98 सनदें श्री क्लीवलैंड के प्रबंधन की अवधि के दौरान कादिर अली के नाम से प्रदान की गई थीं, और यह तथ्य कि 1780 के बाद से सरकार की ओर से किसी ने भी जमींदारी घाटवाली के अनुदान के साक्ष्य के रूप में इन सनदों के औचित्य पर कोई प्रश्न नहीं उठाया है, स्पष्ट रूप से यह स्थापित करता है कि राजा कादिर अली की सनदों ने वास्तव में जमींदारी घाटवाली भू-धृतियों को धारण करने वाले इन घाटवालों की स्थिति और प्रास्थिति को नियमित किया और उन शर्तों को विनिर्दिष्ट किया जिन पर इसके बाद से भू-धृतियां धारित की जानी थीं। दूसरी ओर, भले ही यह स्वीकार कर लिया जाए कि कैप्टन ब्राउन की सनद ने एक सरकारी घाटवाली भू-धृति का सृजन किया था, तो नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती (उपरोक्त) के मामले में पृष्ठ 54 पर लॉर्ड समनर की भाषा में यह भली-भांति कहा जा सकता है कि राजा कादिर अली की सनद, जो उस समय जारी की गई थी जब भागलपुर के कलेक्टर श्री क्लीवलैंड महालत खड़गपुर का प्रबंधन कर

रहे थे, और जिस पर उसके बाद सरकार द्वारा कभी भी आपत्ति या प्रश्न नहीं उठाया गया, "घाटवाली सेवाओं की सरकार द्वारा निर्मुक्ति या उन्हें प्राप्त करने के अधिकार और घाटवाल को नियुक्त करने के अधिकार के किसी तीसरे पक्ष को दिए गए अनुदान की कोटि में आती थी" और, इसलिए, मूल सरकारी घाटवाली भू-धृति समाप्त हो गई और उसका स्थान एक जमींदारी घाटवाली भू-धृति ने ले लिया।

बात केवल राजा कादिर अली की सनद तक ही सीमित नहीं है। 1789 या 1790 में राजा कादिर अली के साथ महालत खड़गपुर का एक दशवार्षिक बंदोबस्त हुआ था, जिसे 1796 में 1793 के स्थायी बंदोबस्त विनियम के अधीन स्थायी कर दिया गया था। जैसा कि लॉर्ड किंग्सडाउन ने '*राजा लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार*' (उपरोक्त) में पृष्ठ 114 पर इंगित किया था, यह निर्विवाद था और वास्तव में उचित रूप से स्वीकार किया गया था कि घाटवाली भूमियां जमींदारी का हिस्सा थीं और जमींदारी के निर्धारण में शामिल तथा उसके द्वारा आच्छादित थीं। इसे उच्च न्यायालय ने '*मुनरंजन सिंह बनाम राजा लीलानंद*' (उपरोक्त) के मामले में भी मान्यता दी थी जब उन्होंने कहा था कि, इसमें कोई संदेह नहीं था कि स्थायी बंदोबस्त के समय यह भू-धृति खड़गपुर की जमींदारी में शामिल थी और जमा जमींदार को देय था। अपील पर, प्रिवी काउंसिल के उनके लॉर्डशिप (न्यायाधीशों) ने भी यह इंगित किया कि घाटवाली भूमियों का पुनर्ग्रहण करने और उनका पुनर्निर्धारण करने के सरकार के दावे को इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि तालुक का राजस्व निर्धारण किया जा चुका था और यह जमींदार की 'माल भूमि' का एक हिस्सा था। '*लीलानंद सिंह बनाम ठाकुर मुनरंजन सिंह*' (उपरोक्त) में मुख्य न्यायाधीश गार्थ ने पृष्ठ 257 पर कहा था कि इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि स्थायी बंदोबस्त के समय तालुक काकवाड़ा खड़गपुर जमींदारी का हिस्सा था और उस तालुक के धारक उस जमींदारी के "आश्रित ताल्लुकदार" थे। तालुक काकवाड़ा के धारक निश्चित रूप से स्वतंत्र ताल्लुकदार नहीं थे क्योंकि इस भू-धृति में जमींदार का लाभप्रद हित था और इन भू-धृतियों को कभी भी स्वतंत्र

तालुकों के रूप में पंजीकृत नहीं किया गया था। लॉर्ड समनर ने तालुक काकवाड़ा का कब्जा वापस पाने के राजा लीलानंद सिंह के प्रयास को "अपनी शिकमी घाटवाली भूमियाँ" का पुनर्ग्रहण करने के उनके प्रयास के रूप में वर्णित किया था। इसके अतिरिक्त, कैप्टन ब्राउन ने 1788 में प्रकाशित अपनी पुस्तक "इंडिया ट्रेक्ट्स" में परगना खड़गपुर से संबंधित केवल लक्ष्मीपुर, हंडवा और चंदन कटोरिया को जंगल तराई कलेक्टर के अधीन तीन घाटवालियों के रूप में दर्शाया था। काकवाड़ा को उस सूची में नहीं दर्शाया गया था" 24 फरवरी, 1860 को सरकार द्वारा खड़गपुर से संबंधित घाटवाली महालों की एक सूची (प्रदर्श डी) तैयार की गई थी, जिसमें महाल खड़गपुर से संबंधित 98 घाटवाली भू-धृतियों को दर्शाया गया था। काकवाड़ा उस सूची में 73 वीं मद है। 1863 में, सरकार और खड़गपुर के राजा के बीच हुए समझौते के समय, सरकार द्वारा खड़गपुर से संबंधित घाटवाली महालों की एक और सूची तैयार की गई थी और काकवाड़ा उस सूची में मद संख्या 40 है। इन दोनों सूचियों में से किसी में भी लक्ष्मीपुर, हंडवा और चंदन कटोरिया, जो कलेक्टर के अधीन थे, को स्थान नहीं मिला। पुनः, 'राजा लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार' (उपरोक्त) के मामले में लॉर्ड किंग्सडाउन के निर्णय में निर्धारित, 1783 और 1808 में भागलपुर के कलेक्टर द्वारा काकवाड़ा के राजा को लिखे गए पत्र स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि सरकार ने यह मान्यता दी थी कि किसी घाटवाल की नियुक्ति और बर्खास्तगी का अधिकार खड़गपुर के राजा में निहित था। जैसा कि लॉर्ड किंग्सडाउन ने 'राजा लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार' (उपरोक्त) में पृष्ठ 114 पर इंगित किया था, जमींदारों को धन के रूप में कुछ लाभ प्राप्त होता था और साथ ही उन्हें घाटवालों की सेवाओं का लाभ भी मिलता था तथा वे उन व्यक्तियों को नियुक्त करने के मूल्यवान अधिकार का उपभोग करते थे, जो भूमियों के साथ, उस पद के कर्तव्यों का भार स्वयं पर लेते थे। यदि राजा कादिर अली की सनद द्वारा सृजित घाटवाली भू-धृतियां सरकारी घाटवाली भू-धृतियां थीं, तो यह बोधगम्य नहीं है कि जमींदार को घाटवाल को नियुक्त या बर्खास्त करने का अधिकार कैसे प्राप्त होगा। ऊपर उल्लिखित तथ्यों और परिस्थितियों पर

विचार करने पर, हमारी यह राय है कि तालुक काकवाड़ा, अपने उद्गम में, एक जमींदारी घाटवाली भू-धृति था और वैसा ही बना रहा तथा वास्तव में वर्तमान समय तक इसके साथ वैसा ही संव्यवहार किया गया है; और आगे यह कि भले ही कैप्टन ब्राउन की सनद के आधार पर यह एक सरकारी घाटवाली भू-धृति बन गया हो, तो भी राजा कादिर अली की सनद के अधीन, या कम से कम, स्थायी बंदोबस्त के बाद, तालुक काकवाड़ा एक जमींदारी घाटवाली बन गया और इस रूप में यह न्यायिक रूप से मान्यता प्राप्त खड़गपुर की प्रथा के अनुसार जमींदार की सहमति से हस्तांतरणीय (अन्यक्राम्य) था।

यह हमारे लिए बिल्कुल स्पष्ट है कि हमारे द्वारा निकाले गए निष्कर्ष हमारे समक्ष उद्धृत किए गए न्यायिक विनिश्चयों (निर्णयों) से किसी भी प्रकार असंगत नहीं हैं। *राजा लीलानंद सिंह बनाम बंगाल सरकार* (उपरोक्त) के मामले में सरकार ने खड़गपुर की जमींदारी से संबंधित घाटवाली भूमियों का पुनर्ग्रहण करने और राजस्व के साथ उनका निर्धारण करने के अपने अधिकार को स्थापित करने का प्रयास किया। सरकार ने 1793 के विनियम 1, धारा 8, खंड (क) के अधीन अधिकार का दावा किया और यह तर्क दिया कि स्थायी बंदोबस्त से पूर्व जमींदार पुलिस प्रतिष्ठानों के रखरखाव में घाटवाली भूमियों की उपज का विनियोजन किया करते थे और चूंकि उस विनियम द्वारा सरकार ने पुलिस के रखरखाव का प्रभार अपने ऊपर ले लिया था, इसलिए भूमियां जमींदारी पर निर्धारित जमा के अतिरिक्त पुनर्ग्रहण के दायित्वाधीन हो गईं तथा खड़गपुर की जमींदारी पर निर्धारित जमा में पुलिस प्रतिष्ठानों के रखरखाव के लिए विनियोजित उपज के संबंध में निर्धारित कोई भी राशि शामिल नहीं थी। 11 घाटवालों के विरुद्ध ग्यारह वाद थे। खड़गपुर के राजा को मूल रूप से कार्यवाहियों में पक्षकार नहीं बनाया गया था, किंतु अंततः उन्हें उनके अपने आवेदन पर एक पक्षकार के रूप में नहीं जोड़ा गया (पाठ में संभावित टंकण त्रुटि)। 1885 में विशेष आयुक्त द्वारा सरकार के पक्ष में अंतिम निर्णय सुनाया गया। खड़गपुर के राजा ने अपील की। सरकार का दावा इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि, प्रथम, घाटवाली भूमियां खड़गपुर की जमींदारी का

हिस्सा थीं और जमींदारी के स्थायी बंदोबस्त में शामिल थीं तथा उस जमींदारी पर निर्धारित जमा द्वारा आच्छादित थीं, और द्वितीय, घाटवाली भू-धृति की भूमियां 1793 के बंगाल विनियम की धारा 8, खंड (4) के अधीन पुनर्ग्रहण के दायित्वाधीन नहीं थीं, क्योंकि उन्हें थाना या पुलिस प्रतिष्ठानों के लिए जमींदारों को दिए गए भत्ते में शामिल किया गया था। लॉर्ड किंग्सडाउन के निर्णय में ऐसा कुछ भी नहीं है जो किसी भी तरह से इस दृष्टिकोण के विरुद्ध जाता हो कि महालत खड़गपुर से संबंधित घाटवाली भू-धृतियां जमींदारी घाटवाली थीं। दूसरी ओर, उनके लॉर्डशिप के प्रेक्षण, जिनमें से कुछ को उपरोक्त किया गया है, स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि वे जमींदारी घाटवाली की प्रकृति के थे जिन पर जमींदार को नियुक्ति और बर्खास्तगी का अधिकार था और यह कि वे जमींदारी का हिस्सा थे तथा जमींदारी के निर्धारण में शामिल और उसके द्वारा आच्छादित थे।

'मुनरंजन सिंह बनाम राजा लीलानंद सिंह' (उपरोक्त), खड़गपुर के जमींदार द्वारा तालुक काकवाड़ा के कब्जे का दावा करने वाला एक वाद था, जो इस अभिकथन पर आधारित था कि भूमियां पुलिस सेवाओं के लिए धारित थीं, कि घाटवालों की नियुक्ति और बर्खास्तगी का अधिकार उसमें (जमींदार में) निहित था, कि उसने उन पुलिस सेवाओं के एवज में धन के भुगतान के लिए सरकार के साथ समझौता कर लिया था जिन्हें वह घाटवालों के माध्यम से प्रदान करने के लिए बाध्य था और यह कि उन सेवाओं की अब आवश्यकता न होने के कारण, वह भूमियों का पुनर्ग्रहण करने का हकदार था। बचाव यह था कि घाटवाल बेदखली के दायित्वाधीन पट्टेदार नहीं थे, बल्कि एक स्थायी भू-धृति धारण करते थे; कि यह स्थायी बंदोबस्त से बहुत पहले से अस्तित्व में था, जो ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि से सीधे प्राप्त सनदों में उल्लिखित एक निश्चित जमा पर और पर्वतीय क्षेत्र तथा दरों की रखवाली की सेवाओं के मुआवाजे के रूप में धारित था, और वे यह सेवा करने के लिए सदैव तत्पर और इच्छुक थे। यदि तालुक काकवाड़ा एक सरकारी घाटवाली होता, तो जमींदारी के पास कब्जे के लिए वाद बनाए रखने का कोई अधिकार-स्थिति नहीं

होता और वाद को इसी संक्षिप्त आधार पर खारिज कर दिया जाना चाहिए था, लेकिन ऐसे किसी बिंदु को गंभीरता से नहीं उठाया गया और मामले को इसी आधार पर लड़ा और निर्णीत किया गया कि तालुक काकवाड़ा एक जमींदारी घाटवाली था। प्रधान सदर अमीन द्वारा वाद को डिक्री किए जाने पर, प्रतिवादी ने अपील की। उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि विधानमंडल के प्राधिकार के बिना खड़गपुर के राजा और सरकार के बीच हुई संविदा ने किसी भी तरह से संविधि और घाटवाल के अधिकारों को प्रभावित नहीं किया, तथा विवादित भू-धृति केवल प्रसादपर्यंत प्रदान की जाने वाली सेवा के भुगतान के रूप में भूमि का मात्र अनुदान नहीं था, बल्कि यह एक निश्चित जमा पर एक शाश्वत आनुवंशिक जोत थी, जिसमें सेवा की जुड़ी हुई शर्त के साथ घाटवाल का एक लाभप्रद हित छोड़ दिया गया था। प्रिवी काउंसिल द्वारा अपील पर उस विनिश्चय को कायम रखा (पुष्ट किया) गया।

इसी तालुक काकवाड़ा से संबंधित अगला मामला '*लीलानंद सिंह बनाम ठाकुर मुरंजन सिंह*' (उपरोक्त) का था, जो खड़गपुर के जमींदार द्वारा काकवाड़ा के घाटवाल के विरुद्ध अपने इस अधिकार की घोषणा के लिए लाया गया एक वाद था कि वह लगान में उन घाटवाली सेवाओं के समतुल्य दर से वृद्धि कर सके जो अनावश्यक हो गई थीं। पुनः, यदि तालुक काकवाड़ा एक सरकारी घाटवाली होता, तो खड़गपुर के राजा के पास घाटवाली सेवाओं के एवज में लगान वृद्धि का दावा करने की कोई अधिकार-स्थिति नहीं होती। खड़गपुर के राजा का यह दावा भी खारिज कर दिया गया था। इस मामले में ऐसे सकारात्मक प्रेक्षण हैं जो यह इंगित करते हैं कि तालुक काकवाड़ा एक "आश्रित" तालुक था या, जैसा कि लॉर्ड समनर ने इसे कहा था, यह एक "शिकमी" तालुक था।

अपीलकर्ता के विद्वान काउंसिल (अधिवक्ता) ने दो मामलों, अर्थात् '*नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती*' (उपरोक्त) और '*रानी सोनाबती कुमारी बनाम राजा कीर्त्यानंद सिंह*'⁽¹⁾ पर बहुत दृढ़ता से निर्भरता व्यक्त की है। दोनों मामले तालुक हंडवा की घाटवाली से संबंधित थे।

(1) (1935) आई.एल.आर. 14 पटना 70.

विद्वान काउंसिल का प्रयास यह दिखाना था कि तालुक काकवाड़ा से संबंधित कैप्टन ब्राउन की सनद और राजा कादिर अली की सनद अपने प्रभाव में तालुक हंडवा से संबंधित कैप्टन ब्राउन की सनद और भागलपुर के कलेक्टर श्री डिकेंसन के पुष्टिकर्ता परवाना के समान थीं। 'नारायण सिंह बनाम निरंजन चक्रवर्ती' में अधीनस्थ न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि हंडवा की भू-धृति बिल्कुल भी घाटवाली भू-धृति नहीं थी। उच्च न्यायालय ने, अपील पर, यह अभिनिर्धारित किया कि परगना को अध्यर्पण से पूर्व एक मुगल घाटवाली भू-धृति के रूप में धारित किया गया था, लेकिन यह एक सरकारी घाटवाली बन गई और उस स्थिति को बदलने के लिए कुछ भी नहीं किया गया था। तथापि, उनका यह मत था कि राजा उदित नारायण सिंह ने इसे घाटवाल के रूप में धारित नहीं किया था और उदित नारायण सिंह के उत्तराधिकारी उनके द्वारा सृजित बंधक की विधिमान्यता पर आक्षेप नहीं कर सकते थे। उच्च न्यायालय के इस विनिश्चय को प्रिवी काउंसिल द्वारा उलट दिया गया था। 'रानी सोनाबती कुमारी बनाम राजा कीर्त्यानंद सिंह(1)' में न्यायमूर्ति फजल अली ने घाटवाली भू-धृतियों से संबंधित विधि पर विस्तार से चर्चा की। हमारे समक्ष अपीलकर्ता के विद्वान काउंसिल ने लॉर्ड समनर और न्यायमूर्ति फजल अली के निर्णय के कई अनुच्छेदों पर निर्भरता व्यक्त की है। इन दोनों विनिश्चयों को प्रासंगिक सनदों, अर्थात् कैप्टन ब्राउन की सनद और श्री डिकेंसन के परवाना के अर्थान्वयन पर आधारित माना जाना चाहिए और उन दो मामलों के निर्णयों में पाए जाने वाले प्रेक्षकों को उस अर्थान्वयन के प्रकाश में पढ़ा जाना चाहिए। तालुक काकवाड़ा की स्थिति हमें तालुक हंडवा की स्थिति से पूर्णतः भिन्न प्रतीत होती है। न्यायमूर्ति शियरर अपने निर्णय में दोनों घाटवालों की स्थिति के बीच अंतर के पांच बिंदुओं को संदर्भित करते हैं, अर्थात्-

(1) हंडवा के घाटवालों ने खड़गपुर के राजा की भूमियों पर निर्धारित भू-राजस्व की राशि पर कभी कोई रसूम अदा नहीं किया;

(2) हंडवा के घाटवाल पूर्व में अपना क्विट रेंट सीधे सरकारी खजाने में जमा किया करते थे;

(3) भागलपुर के कलेक्टरों द्वारा तैयार की गई खड़गपुर राज के अधीन घाटवाली भू-धृतियों की एक से अधिक सूचियों में हंडवा का नाम नहीं पाया गया था;

(4) खड़गपुर राज की बहाली के बाद, हंडवा के घाटवालों ने राजा कादिर अली से सनद प्राप्त करने के बजाय भागलपुर के तत्कालीन कलेक्टर, श्री डिकेंसन से एक सनद प्राप्त की थी; और

(5) पद में रिक्ति होने की स्थिति में हंडवा के एक नए घाटवाल को नियुक्त करने के राजा कादिर अली के दावे को न्यायालयों द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था।

इसी प्रकार, न्यायमूर्ति चटर्जी ने भी अपने निर्णय में दोनों घाटवालों की प्रास्थिति में तात्त्विक अंतरों को इंगित किया है। तालुक हंडवा से संबंधित सनद में प्रयुक्त भाषा कुछ भिन्न है। खड़गपुर के जमींदार को 'क्विट रेंट' के भुगतान का कोई प्रश्न ही नहीं है। यद्यपि हंडवा खड़गपुर की जमींदारी में शामिल था, किंतु ऐसा केवल भौगोलिक अर्थ में और राजकोषीय प्रयोजनों के लिए किया गया था। हंडवा के वार्षिक जमा को कभी भी खड़गपुर के राजा की 'माल संपत्तियों' का हिस्सा नहीं माना गया था, जिस पर उनसे राजस्व का निर्धारण किया गया हो। इसके विपरीत, हंडवा का निर्धारण एक पृथक् इकाई के रूप में किया गया था और यह निर्धारण हंडवा द्वारा खड़गपुर के राजा के माध्यम से सरकार को देय बनाया गया था। खड़गपुर के राजा का हंडवा की घाटवाली पर न तो धन के रूप में या सेवाओं के माध्यम से कोई लाभप्रद हित है और न ही नियुक्ति या बर्खास्तगी की कोई शक्ति है।

अपीलकर्ता के विद्वान काउंसिल ने लॉर्ड समनर के निर्णय के कई अनुच्छेदों पर निर्भरता व्यक्त की है, लेकिन वे अनुच्छेद एक ऐसे अर्थ के ग्रहणशील हैं जो तालुक काकवाड़ा

से संबंधित दोनों सनदों के अर्थान्वयन पर हमारे द्वारा निकाले गए निष्कर्षों के साथ सुसंगत है। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि अपीलकर्ता निर्णीत-ऋणी ने स्वयं इसी तालुक काकवाड़ा को खड़गपुर के राजा के पास इस अभिकथन पर बंधक रखा था कि तालुक काकवाड़ा "जमींदार की सहमति" से हस्तांतरणीय था।

हमारे निर्णय में, न्यायमूर्ति श्री शियरर और न्यायमूर्ति श्री चटर्जी द्वारा निकाले गए अंतिम निष्कर्ष स्पष्ट रूप से सही हैं और इस अपील को खर्चों सहित खारिज किया जाना चाहिए।

अपील खारिज की जाती है।

अपीलकर्ता के अभिकर्ता: आई. एन. श्रॉफ।

उत्तरदाताओं के अभिकर्ता: एस. पी. वर्मा।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।